श्रीश्रीगुरु-गौरांगौ जयतः

श्रीनाम चिंतामणि

श्रीलभक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी

सन् 1968 में कृष्णनगर मठ में वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में टाऊन हाल में अनुष्ठित दूसरे अधिवेशन में श्रील गुरुदेव जी का अभिभाषण।

"श्रीचैतन्यदेव जी ने हमें जो दिया है उनमें से एक विशिष्ट देन है- श्रीनाम-संकीर्त्तन। 64 प्रकार के साधन अंगों में जो पाँच मुख्य साधन हैं, वे हैं- साधुसंग, नामकीर्त्तन,

भागवत-श्रवण, मथुरावास और श्रद्धा से श्रीमूर्त्ति का सेवन। इन पाँच मुख्य भक्ति अंगों के साधनों में श्रीनाम-संकीर्त्तन सर्वोत्तम है।”

“तार मध्ये सर्वश्रेष्ठ नाम संकीर्त्तन।
निरपराधे नाम लैले पाय प्रेमधन।।’

चौसठ प्रकार के भक्ति अंगों में नौ प्रकार के भक्ति अंग श्रेष्ठ हैं, पुनः नौ में से पांच अंग श्रेष्ठ हैं, उनमें भी श्रीहरिनाम संकीर्त्तन सर्वश्रेष्ठ है। निरापराध होकर नाम लेने से शीघ्र ही प्रेम-सम्पत्ति (भक्ति) प्राप्त हो जाती है।

यहाँ एक शर्त दी है 'निरपराधे'। अपराध-युक्त होकर कीर्त्तन करने पर नाम का वास्तविक फल नहीं देखा जाता। श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास मुनि ने पद्मपुराण में दस प्रकार के नामापराधों की बात का उल्लेख किया है। जो निश्चित मंगलप्रार्थी हैं, वे इन दस प्रकार के नामापराधों के विषय में सतर्क होकर नामानुशीलन

करेंगे। नामकीर्त्तन करने के वास्तविक सुफल की प्राप्ति से हम वन्चित क्यों रहें? उसका कारण अर्थात् हरिनाम के वास्तविक फल से वन्चित रहने का कारण नाम की शक्ति अथवा हरिनाम के सामर्थ्य का अभाव नहीं है। इसमें हमारे अपराध ही मूल कारण हैं। जिस प्रकार भगवान् सर्वशक्तिमान है, भगवन्नाम

भी वैसे ही सर्वशक्तियुक्त है। भगवान् के वाच्य और वाचक – ये दो स्वरूप होने पर भी इन दोनों में भगवान् के वाचक स्वरुप की महिमा ही अधिक है। दुर्भाग्यवश ही सर्वसन्तापहारी, सर्वशुभद, सर्वाभीष्टप्रद श्रीनाम की महिमा में हम विश्वास नहीं जमा पाते। इसलिए बड़े दुःख के साथ श्रीमन् महाप्रभु कहते हैं-

"नाम्नाममकारि बहुधा निजसर्वशक्तिस्तत्रार्पिता
नियमितः स्मरणे न कालः।
एतादृशी तव कृपा भगवन् ! ममाऽपि
दुर्दैवमी?दृशमिहाजनि नाऽनुरागः।"
(चै. शिक्षाष्टक 2 श्लोक)

हे भगवन्! आपके नाम ही जीवों के लिए सर्वमंगलप्रद हैं, अतः जीवों के कल्याण हेतु आप अपने राम,नारायण, कृष्ण, मुकुन्द, माधव, गोविन्द, दामोदर आदि अनेक नामों के रूप में नित्य प्रकाशित हैं। आपने उन नामों में उन-उन स्वरूपों की सर्वशक्तियों को स्थापित किया है। अहैतुकी कृपा हेतु आपने उन नामों

के स्मरण में सन्ध्या-वन्दना आदि की भाँति किसी निर्दिष्टकाल आदि का विचार भी नहीं रखा है अर्थात् दिन-रात किसी भी समय भगवन्नाम का स्मरण-कीर्त्तन किया जा सकता है-ऐसा विधान भी बना दिया है। हे प्रभो! आपकी तो जीवों पर ऐसी अहैतुकी कृपा है, तथापि मेरा तो नामापराधरूप ऐसा दुर्दैव है

कि आपके ऐसे सर्वफलप्रद सुलभ नाम में भी अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ।

हम कह सकते हैं कि भगवान को बुलाने से, या भगवद् नाम की चपर-चपर करने से क्या होगा? नाम तो एक शब्द मात्र है। हमारे अनुभव में शब्द और शब्दोद्दिष्ट वस्तु एक नहीं है। शब्द के द्वारा तो वस्तु का

निर्देश किया जाता है। दृष्टान्तस्वरूप 'जल', इस शब्द के उच्चारण द्वारा हमारी प्यास नहीं बुझती है। प्यास बुझने की क्रिया जल-रूप वस्तु ग्रहण करने की अपेक्षा रखती है। इसलिये शब्द ही वस्तु नहीं है।

परन्तु हमें ये स्मरण रखना चाहिए कि जड़ शब्द और शब्दोद्दिष्ट वस्तु में

माया का एक पर्दा है। किन्तु जड़ातीत अप्राकृत शब्दों में अर्थात् भगवान् के नामों में माया का पर्दा नहीं है, इसलिए इसे शब्द-ब्रह्म कहते हैं। शब्दब्रह्म का शब्द और शब्दोद्दिष्ट वस्तु एक ही हैं अर्थात् भगन्नाम और नामी भगवान में कोई भेद नहीं है।

'नाम चिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्य-रसविग्रहः।
पूर्णः शुद्धो
नित्यमुक्तोऽभिन्नत्वान्नामनामिनोः।।'

‘कृष्णनाम’ चिन्तामणि स्वरूप तथा कृष्ण चैतन्य रस विग्रह, पूर्ण, मायातीत एवं नित्यमुक्त है, क्योंकि नाम और नामी में भेद नहीं है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीकृष्ण-संकीर्त्तन का जय गान किया है। एक मात्र नाम संकीर्त्तन द्वारा ही अंदर की मलिनता दूर होगी, इसलिये कोई यज्ञ अथवा व्रतादि करना आवश्यक नहीं है, किन्तु यह हमें विश्वास नहीं होता। मोटी

बुद्धि वाले व मूर्ख होने पर भी हम स्वयं को विद्वान् समझते हैं। एक और बात है कि बाहरी कुछ हल्ला-गुल्ला या दौड़ भाग या मेहनत आदि होने पर हम समझते हैं कि कुछ हुआ है।

कानपुर में मैं किसी एक सेठ के घर में गया। उन्होंने ने मुझे एक दिन कहा, "स्वामी जी! यहाँ पर एक बड़े महात्मा आये थे और उन्होंने एक यज्ञ

किया। उस यज्ञ में उन्होंने लगभग सौ मन घी डाला।” सौ मन घी यज्ञ में डालना क्या आसान बात है। यहाँ पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि विराट आडम्बर देखने से हम उस ओर आकृष्ट हो जाते हैं। कुछ खाता नहीं, केवल फल खाकर रहता है, केवल दूध पीकर रहता है या मौन रहता है अर्थात् हम जो करते है

उसके विपरीत कुछ देखने से हम उनको महात्मा समझने लगते हैं, किन्तु शास्त्रों में कहीं पर भी साधु के यह सब लक्षण वर्णित नहीं हुये हैं। बात न करने से ही वह महात्मा होगा। यह हम नहीं मानते। आंख बंद करके हम क्या दूसरी चिन्ता नहीं कर सकते हैं? जो विषय हम देख रहे हैं, सुन रहे हैं उसकी हम मन-ही-मन खूब

चिन्ता कर सकते हैं। कर्मेन्द्रिय संयम करके जो मन-ही-मन विषयों की चिन्ता करता है उसको मिथ्याचारी कहा गया है:

"कर्मेंद्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढ़ात्मा मिथ्याचारः स उच्यते।।"
(श्रीमद्भगवद्गीता 3/6)

जिसका चित्त शुद्ध नहीं हुआ उसका केवल कर्मेन्द्रियों को संयम करने से कुछ होने वाला नहीं है। वह व्यक्ति कर्मेन्द्रियों का संयम कर मन ही मन विषयों का चिन्तन करता रहता है,

इसलिए ऐसे मूढ़ व्यक्ति को 'मिथ्याचारी' कहा जाता है।

अन्दर और बाहर से जो भगवान का अनुशीलन करते हैं, अन्ततः बाहर से न होने पर भी अन्दर से जो भगवद् चिन्तन करते हैं, वे साधु हैं। बाहर से काफी दिखावा रहने पर भी अन्दर से जो खाली हैं वह कदापि साधु नहीं है। जो निरंतर हरिकीर्तन करते हैं, वे यथार्थतः मौन हैं

और वे ही साधु हैं। कारण, उनको दूसरी चिन्ता का अवसर ही नहीं है।

जबरदस्ती करके हम नाम को अपने अधीन नहीं कर सकते हैं, जो जबरदस्ती करके होता है अर्थात् जो कर्ता अभिमान से किया जाये वह चिन्मय नाम का material aspect है। नाम साक्षात् भगवान हैं। ये हरिनाम हमारे

भोग की वस्तु नहीं है। अपनी भोग की वस्तुओं को लाकर देने के लिये, अपनी खुशामद करवाने के लिये या अपनी सेवा करवाने के लिए जब हम भगवान् को बुलाते हैं तब भगवान् नहीं आते हैं, उस समय भगवान् की माया आकर हमसे अपनी खुशामद करवाती है। इसलिये कर्तत्त्वाभिमान से हरिनाम नहीं होता है। श्रीकृष्ण

के नाम, रूप, गुण व लीलायें प्राकृत भोगोन्मुख इन्द्रियों की ग्रहण योग्य वस्तु नहीं हैं, सेवोन्मुख चिन्मय इन्द्रियों के द्वारा ग्राह्य हैं-

" अतः श्रीकृष्ण नामादि न भवेद ग्राह्यमिन्द्रियैः।
सेवोन्मुख हि जिह्वादौ स्वमेव स्फुरत्यदः।।"
(भ.र.सि.पू.वि. 2/109)

श्रीकृष्ण के नाम, रूप, गुण, लीला-ये सभी अप्राकृत तत्त्व हैं। प्राकृत चक्षु, कर्ण, नासिका, रसना आदि इन्द्रियों के द्‌वारा ग्रहणीय नहीं हैं। जब जीवों

के हृदय में श्रीकृष्ण की सेवा करने की वासना उदित होती है, उस समय उनकी जिह्वा आदि इन्द्रियों पर नाम स्वयं स्फुरित होते हैं।

श्रीलपरमगुरुदेव